शब्दाभिषेक



जयराम दास रस्तोगी

प्रिय श्री प्रसन्न कुमार अवस्थी जी

शब्दाभिषेक

(कुण्डलिया-संग्रह)

जयराम दास रस्तोगी 'दास'

शब्दाभिषेक

(कुण्डलिया-संग्रह)

रचनाकार :

जयराम दास रस्तोगी 'दास'

प्रकाशक :

मधुलिका-प्रकाशन

189/51 खत्री-टोला, मशकगंज, लखनऊ-18

प्रथमावृत्ति :

मार्च 2005 ई0

मूल्य :

पचास रुपये

शब्द-सज्जा :

जयन्ती-कम्प्यूटर्स

51 खत्री-टोला, मशकगंज, लखनऊ-18

मोबा0 : 9415761418

मुद्रक :

शुभम् आफसेट, लखनऊ

मोबा0 : 9415582032

Shabdabhishek

(A Collection Of Kundaliyas)

Composed by : Jai Ram Dass Rastogi

Rs. 50/- only

समर्पण

अर्पित जीवन कर दिया, संतति हित निःशेष।
परम धाम को जो गए, केवल स्मृति-शेष।।
केवल स्मृति-शेष, मिली जिनसे यह काया।
शुचि आचार-विचार, स्नेह-आशिष नित पाया।।
प्रथम प्रकाशित ग्रन्थ, विनत शिर होकर हर्षित।
तात-मात को तनय, 'दास' करता है अर्पित।।

—जयराम दास रस्तोगी 'दास'



डॉ0 परमानन्द जड़िया
बी0ए0, एल-एल0बी0, एच0डी0सी0
साहित्याचार्य,
विद्या-वाचस्पति (पी-एच0डी0)

'जड़िया-निवास'
51, खत्री-टोला, मशकगंज
लखनऊ- 226018
मो0 : 9335256169

यशस्वी भव

कविता को कुछ विद्वानों ने 'मानव मन की सहज अभिव्यक्ति' कहकर परिभाषित किया, तो कुछ ने इसे 'दिव्य चेतना' कहा है। कविता के कोई स्कूल कालेज नहीं है। पिंगल-ग्रंथों को पढ़कर यदि कवि बनना सम्भव होता तो अनेक आचार्य कवि बन जाते, परन्तु ऐसा नहीं हैं। बड़े-बड़े विद्वान कवि नहीं बन पाते, जबकि कबीर दास जैसा बे पढ़ा-लिखा व्यक्ति श्रेष्ठ कवि बन गया। आदि कवि वाल्मीकि के मुख से वेदना के क्षणों में अनायास ही काव्य का अवतरण हुआ था। काव्य की यह दिव्य चेतना जब किसी प्रबुद्ध विद्वान् के अन्तर में जागृत होती है तो वह व्यास, भास, कालिदास और तुलसीदास बन जाता है। परन्तु है यह जन्मजात गुण, जो सतत् साधना से परिपक्वता को प्राप्त होता है।

'शब्दाभिषेक' के प्रणेता श्री जयराम दास रस्तोगी एक ऐसे ही कवि हैं, जिन्हें काव्य-चेतना छात्र-जीवन से ही प्राप्त हुई। वे कवियों तथा शायरों का सान्निध्य प्राप्त करने हेतु निरन्तर प्रयत्नशील रहे और साहित्य की विभिन्न विधाओं में उन्होंने श्रम-साध्य कार्य किया। मेरा उनसे

परिचय लगभग एक वर्ष पूर्व हुआ जब वे मेरे आवास पर आये और पूछने पर ज्ञात हुआ कि वे शाहाबाद जनपद हरदोई के निवासी रहे हैं। परिचय-पुस्तिका के पृष्ठ बढ़ने लगे और मुझे यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि उन्होंने स्वतंत्रता-संग्राम के क्रान्तिकारियों पर बहुत बड़ा नाटक लिख डाला। इस नाटक में क्रान्तिकारियों के जीवन के रोमांचक ऐतिहासिक वृत्त पूर्ण तथ्यों के साथ उद्घाटित हुये हैं। नाटक का आकार बहुत बड़ा था और उसमें क्रान्तिकारियों द्वारा दिये गये लम्बे-चौड़े भाषणों को यथावत् उद्धृत किया गया था। पढ़कर मै बहुत प्रभावित हुआ, परन्तु मुझे लगा कि इतना बड़ा नाटक मंचन की दृष्टि से उपयुक्त नहीं है। अतः मैंने श्री रस्तोगी को यह परामर्श दिया कि वे अलग-अलग पात्रों के छोटे-छोटे नाटक तैयार करें जो दो-तीन घंटे में मंचित हो सकें। उन नाटकों में श्री रस्तोगी ने खड़ी बोली के जो गीत लिखे थे, वे भाव, भाषा एवं शैली की दृष्टि से बड़े परिपक्व थे। हस्त-लेख भी श्री रस्तोगी का बड़ा सुन्दर है। आगे चलकर यह भी विदित हुआ कि श्री रस्तोगी उर्दू शेरो शायरी से प्रभावित क़ता और ग़ज़लें भी लिखते हैं। कुछ समय बाद उन्होंने अपनी कुण्डलियों की कापी मुझे दिखायी। ये कुण्डलियाँ शास्त्रीय प्रतिमान को ध्यान में रख कर लिखी गयी थीं। इन सबको देख कर मुझे लगा कि श्री रस्तोगी एक प्रतिभावान जागरूक साहित्यकार हैं। मैंने उनसे कहा– 'आप इन्हें पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशनार्थ भेजिये और यदि सम्भव हो तो पुस्तकबद्ध रूप में छपवा डालिये, ताकि आपकी साधना का उचित मूल्यांकन हो सके।'

श्री रस्तोगी ने मेरे आग्रह को स्वीकार किया और

उनकी कुण्डलियाँ 'राष्ट्र धर्म, 'चरित्र विकास', 'स्वर्ण गौरव', 'अगीतायन', 'भाव-चित्रण', 'ब्रज कुमुदेश', तथा अन्यान्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगीं। मेरे आग्रह पर ही उन्होंने अपनी कुण्डलियों का यह संग्रह 'शब्दाभिषेक' नाम से 'मधुलिका-प्रकाशन' को प्रकाशनार्थ भेजा है।

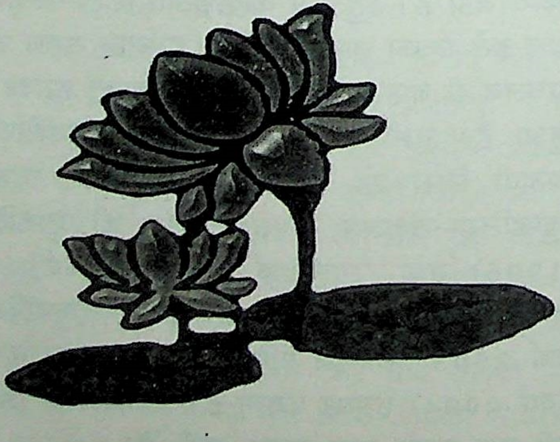
'शब्दाभिषेक' में संकलित श्री रस्तोगी की ये कुण्डलियां विविध भाव-भूमि पर लिखी गयी हैं। श्री रस्तोगी आस्थावान भक्त-कवि होने के साथ-साथ राष्ट्रीय विचारधारा के सजग समाज-प्रहरी भी हैं। उनकी इन कुण्डलियों में दहेज, आतंकवाद, पर्यावरण-प्रदूषण, सांस्कृतिक-क्षरण आदि अनेक ज्वलन्त समस्याओं को रेखांकित किया गया है। कुछ कुण्डलियों में हास्य की फुलझड़ियां और व्यंग्य का तीक्ष्ण प्रहार भी है।

शिल्प की दृष्टि से कुण्डलिया एक विशिष्ट तथा जटिल छन्द है, जिसमें अपनी अभिव्यक्ति को बाँधना सरल कार्य नहीं है। बहुत से कवि इसके शिल्प-विधान से घबरा कर इसे छक्का नाम दे देते हैं। वर्तमान समय में यह छन्द प्रचलन से बाहर होता जा रहा है, परन्तु इसका अन्त नहीं हुआ है। अभी भी अनेक रचनाकार कुण्डलिया छन्द में बखूबी लिख रहे हैं। डॉ0 दिनेश चन्द्र अवस्थी के दो कुण्डलिया-संकलन क्रमशः 'दिनेश की कुण्डलियां' (वर्ष 1996) तथा 'सामयिक कुण्डलियां' (वर्ष 1999) श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध' का 'तुलसी' (कुण्डलिया-शतक) वर्ष 2003 तथा इन पंक्तियों के लेखक का कुण्डली-चक्र' (वर्ष 2004) इसका प्रमाण हैं। 'शब्दाभिषेक' इसी शृंखला की एक नूतन तथा सशक्त कड़ी है।

'शब्दाभिषेक' की भाषा परिमार्जित खड़ी बोली है।

भावाभिव्यंजना अनूठी है। कवि की मौलिकता सर्वत्र दर्शनीय है। मेरा विश्वास है कि श्री जयराम दास रस्तोगी का यह प्रथम काव्य-ग्रंथ अपनी शिल्प-कला, विचारों की प्रौढ़ता, कथन-भंगिमा, दृष्टि-व्यापकता तथा सरसता से काव्य-प्रेमियों तथा प्रबुद्ध पाठकों को प्रभावित करेगा और इसका सर्वत्र आदर होगा। श्री रस्तोगी की लेखनी से निरन्तर उत्तम कृतियों का सृजन होता रहे और वे यशस्वी तथा दीर्घजीवी हों, प्रभु से यह प्रार्थना है।

डॉ0 परमानन्द जड़िया



आत्म-निवेदन

सर्वप्रथम स्पष्ट कर दूँ कि मैं कवि नहीं हूँ। मेरा मानना है कि--

'कविता वे ही जानते, जिनको पिंगल-ज्ञान।
तुकबन्दी जो कर रहे, नहीं विदुष मतिमान।।
नहीं विदुष मतिमान, भले उनका है बहुमत।
है कवि वही प्रवीण, लिखे जो पिंगल सम्मत।।
वस्त्राभूषण हीन, न भावे जैसे वनिता।
अलंकार रसहीन, लगे वैसे ही कविता।।'

अस्तु ! हिन्दी भाषा से लगाव, कवियों/शायरों के साहचर्य तथा कतिपय ऐसी मानव स्वभाव की भ्रांतियों (कि यदि मैं अमुक परिस्थितियों में होता तो सिद्धहस्त लेखक या कवि होता) के वशीभूत प्रायः युवावस्था में तुकबन्दी करने लगा। छात्र-जीवन में प्रख्यात कुण्डलियाकार स्वनाम धन्य गिरिधर कविराय से प्रभावित रहा। कुण्डलिया के छंद शिल्प से अनभिज्ञ यदा-कदा कुण्डलिया की तुकबन्दी के प्रयास भी किये।

अपने पितामह स्व0 राम बिलास रस्तोगी (जो उर्दू के अच्छे ज्ञाता थे), से उर्दू फ़ारसी मिश्रित शेरो शायरी सुन-सुनकर इस शीरीं जुबान के प्रति मेरे मन में उत्कंठा जागृत हुई और मैं उर्दू शायरों तथा शाहाबाद (हरदोई) की

संस्था 'गहवार-ए-अदब' के सम्पर्क में आया और उसकी तरही नशिस्तों, राष्ट्रीय पर्वों पर आयोजित मुशायरों तथा अनेक स्तरीय मुशायरों में एक समर्पित कार्यकर्ता की भाँति शिरकत करने लगा, किन्तु यहाँ भी लेखन तुकबंदी तक ही सीमित रहा। छोटी-मोटी नशिस्तों को छोड़कर अपने अन्तर्मुखी स्वभाव और झिझक के कारण मंचों से विमुख ही रहा। ये मेरे अर्थाभाव, संघर्ष और बेकारी के दिन थे।

मण्डी समिति की सेवा में आने पर हरदोई नगर में प्रायः कवि-सम्मेलनों, मुशायरों, नाट्कों एवम् सांस्कृतिक कार्यक्रमों का श्रोता एवं दर्शक रहा। परन्तु प्रायः सन् 1978 या 1979 की बात है- एक शायर ने देववाणी संस्कृत पर ''वो देबबानी हुआ करेगी उसे जुबां तो नहीं कहेंगे'' पढ़कर कटाक्ष किया। शायर का नाम तो याद नहीं है, किन्तु यह पंक्ति चुभ गयी। अदब के मंच से यह खुली बेअदबी, असहिष्णुता और प्राचीनतम/समृद्ध भाषा का न केवल अपमान वरन् भारतीय संस्कृति और अस्मिता का उपहास लगा। उस दिन से मुशायरों से पल्ला झाड़ लिया। साथ ही तुकबन्दी से भी।

ईमानदारी से कहूँ तो पूर्ण निष्ठा और समर्पण से सेवारत रहते हुये साहित्य से जुड़ाव का समय भी नहीं मिला। सम्प्रति शाहाबाद (हरदोई) निवासी हास्य कवि डॉ0 बी0डी0विश्वकर्मा 'चाकर' यदा-कदा काव्य-सृजन हेतु प्रेरित करते रहे। शायद वर्ष 2000 में उनके शुभकामना-पत्र का प्रत्युत्तर दो कुण्डलियों में दिया। पुनः डॉ0 साहब की दो कुण्डलियाँ मिलीं। इस प्रकार लेखनी को कुछ गति मिली तथा सामयिक कुण्डलियाँ लिखने की ओर प्रवृत्त हुआ।

लखनऊ के यशस्वी साहित्यकार परम श्रद्धेय डॉ0 परमानन्द जड़िया जी का सान्निध्य पाने पर छंद विधान की स्वल्प जानकारी हुई। उनकी सतत् प्रेरणा, आशीर्वाद और मार्गदर्शन से लेखनी गतिमान हुई। व्यस्तता और समयाभाव तो था ही तथापि गुरुवर डॉ0 जड़िया (जिनके श्रीचरणों में बैठकर ही कुछ सीख सका हूँ) के निर्देश पर इतस्ततः छपने भी लगा। स्यात् विजयादशमी (सन् 2004) के आसपास उनका आदेश मिला कि 'इन्हें पुस्तकाकार छपवाओ'। सुना है कि पारस का स्पर्श कर लौह स्वर्ण बन जाता है। ये कुण्डलियाँ जैसी भी हैं– प्रकाशित होने के उपरान्त मेरी नहीं पाठकों की हैं। मैं तो बस यही कहूँगा–

'साल–हा–साल की तलाश के बाद,
ज़िन्दगी के चमन से छाँटे हैं।
पेशे ख़िदमत हैं साहबे आलम,
मेरे दामन में चन्द काँटे हैं।।'(अज्ञात)

कल्पना, रसबोधादि मुझमें लेश मात्र भी नहीं है। विश्व, देश और समाज की विद्रूपताओं एवं विसंगतियों को यथार्थ के कठोर धरातल पर उकेरने की चेष्टा भर की है। इन कुण्डलियों में छंद–शिल्प, भाषादि की जो त्रुटियाँ और दोष हैं, केवल वे ही मेरे हैं तथा मेरी अल्पज्ञता के दोष हैं।

ये कुण्डलियाँ कैसी लगीं, इस पर अपने विचारों से जो पाठक, साहित्य–प्रेमी, मनीषी एवम् विद्वान् समीक्षक अवगत कराने की कृपा करेंगे, उनका आभारी रहूँगा। निष्पक्ष, स्पष्ट एवं स्वस्थ आलोचनाएं सादर शिरोधार्य करूँगा, क्योंकि वे ही मेरा भावी पथ प्रशस्त करेंगी।

इनके प्रकाशन हेतु साग्रह, प्रेरणा परमादरणीय श्री

दयानन्द जड़िया 'अबोध' जी की भी रही है। गुरुतुल्य इन भ्रातृ द्वय एवम् वरिष्ठ साहित्यकारों के प्रति आभार व्यक्त करना मेरे स्तर से धृष्टता होगी। हार्दिक विनम्रता सहित उनसे आशीषाकांक्षी हूँ।

अन्त में 'शब्दाभिषेक' को प्रकाशित कर मुझे साहित्यालोक में लाने हेतु 'मधुलिका-प्रकाशन' लखनऊ के पदाधिकारियों, रुचिपूर्वक कम्पोजिंग आदि कार्यों को सम्पन्न करने हेतु 'जयन्ती-कम्प्यूटर्स' लखनऊ के श्री राजेन्द्र प्रसाद जड़िया जी व चि0 राहुल एवम् मुद्रण हेतु 'शुभम आफसेट', लखनऊ का मैं हृदय से आभारी हूँ तथा साहित्य-सर्जना में सतत् योगदान के निमित्त इन सभी को अर्थ, सामर्थ्य और साधन सुलभ होते रहें— ऐसी परमपिता परमात्मा से कामना करता हूँ। इसके अतिरिक्त भी जिन महानुभावों का प्रत्यक्ष या परोक्ष किंचित भी सहयोग रहा है, उनका भी हृदय से आभारी हूँ।

जय माँ भारती।

वसंत पंचमी विक्रम सम्वत् 2061, **जयराम दास रस्तोगी**

सम्पर्क :
538क II/1592, त्रिवेणी नगर III,
सीतापुर रोड, लखनऊ (उ0प्र0)
पिनकोड— 226020
दूरभाष— 0522-2758448



विनय

गौरी-सुत शंकर तनय, गणाधिपति महराज।
सिद्धि-धाम करिवर वदन, प्रथम पूज्य गणराज।।
प्रथम पूज्य गणराज, बुद्धि विद्या के दाता।
एकदन्त श्रीमन्त, सृष्टि के भाग्य-विधाता।।
खड़ा 'दास' नत शीश, लेखनी लेकर बौरी।
दो मसि का रसदान, गजानन-शिव-माँ गौरी।।

(१)

वाणी वीणापाणि का, यश गावे संसार।
कृपा-दृष्टि कर ज्ञान का, दे अक्षय भण्डार।।
दे अक्षय भण्डार, शब्द का पड़े न टोटा।
हों रसपूरित वाक्य, भाव-पथ रहे न छोटा।।
चरणों में नत 'दास', पढ़ें हरषें सब प्राणी।
दे आशिष जगदम्ब, भुवन में गूँजे वाणी।।

(२)

सीतापति दशरथ तनय, हे हनुमत के इष्ट।
मर्यादा पुरुषोत्तम, सारँग-पाणि विशिष्ट।।
सारँग-पाणि विशिष्ट, सखा स्वामी केवट के।
रावणारि हे राम, सर्वव्यापी घट-घट के।।
शबरी का आतिथ्य, हृदय जन-जन का जीता।
महिमा मण्डित किया, लोकमत छोड़ी सीता।।

(३)

शय्या शेष अनन्त की, क्षीर-सिन्धु विश्राम।
लक्ष्मी नारायण सहित, त्रेता सीताराम।।
त्रेता सीताराम, अनुज फणपति-अवतारी।
बन्धु वीर सौमित्र, दनुज दल प्रलयंकारी।।
इन्द्रजीत को जीत, राम जी के प्रिय भय्या।
आत्म संयमी वर्ष, चतुर्दश नींद न शय्या।।

(४)

पालन-पोषण सृष्टि का, भरण-भार साकार।
राम-राज के श्री भरत, शुचि पावन आधार।।
शुचि पावन आधार, भ्रातृ-भक्ति जग पावन।
नन्दि ग्राम में वास, खड़ाऊँ रख सिंहासन।।
साक्षात तप मूर्ति, किया सत्ता-संचालन।
उभय बन्धु ने किया, प्रजा का समुचित पालन।।

(५)

भाई लक्ष्मण वन चले, प्रभु सेवा अविराम।
सुहृद सहोदर शत्रुहन, सहचर से निष्काम।।
सहचर से निष्काम, भरत का साथ निभाया।
सेवा भाव अनन्य, अवध का राज चलाया।।
लवणासुर के काल, मधु पुरी रुचिर बसाई।
भ्रातृ-भाव आदर्श, वंद्र्य हैं चारों भाई।।

(६)

चाकर प्रिय श्री राम के, महाबली हनुमान।
अजर अमर ज्ञानी बनो, सीता का वरदान।।
सीता का वरदान, भेद अहिवात जानकर।
स्वर्ण-शैल सी देह, मुदित सिन्दूर सानकर।।
जय-जय श्री बजरंग, राम सेवक करुणाकर।
दीन अकिंचन 'दास', वीर हनुमत के चाकर।।

(७)

टीका अपयश का लगा, कैकेयी के भाल।
दासी लांछित मन्थरा, फँसी दैव के जाल।।
फँसी दैव के जाल, लक्ष्य उनका जनहित था।
वध का कारण बन्धु, यह नितान्त अनुचित था।।
निर्णायक था कृत्य, विभीषण कैकेयी का।
होते यदि ये नहीं, न होता राघव-टीका।।

(८)

माया पति राधा रमण, श्री गोविन्द मुरारि।
थे विह्वल वसु-देवकी, कारा में कंसारि।।
कारा में कंसारि, अवतरित गोपी वल्लभ।
भद्र भाद्रपद मास, प्रखर-पर्जन्य तड़ित नभ।।
कृष्ण पक्ष अष्टमी, कूल कालिन्दी भाया।
कला षष्ठ दस सिद्धि, अष्ट नव निधि प्रभु माया।।

(९)

लीला की रस माधुरी, छलकायी ब्रज-धाम।
नन्द यशोदा गोपियाँ, गोप ग्वाल निष्काम।।
गोप ग्वाल निष्काम, चले यदुपति निर्मोही।
गेह-नेह अनुराग, करें कब कर्म-बटोही।।
लक्ष्य जगत-कल्याण, पन्थ अति कठिन कँटीला।
मूढ़ मन्द मति 'दास', न जाने अच्युत-लीला।।

(१०)

गीता में श्री कृष्ण ने, दिया दिव्य संदेश।
कर्म कामना से रहित, करने का उपदेश।।
करने का उपदेश, कहा यह तन नश्वर है।
आत्म-तत्व पहचान, आत्मा अजर-अमर है।।
ब्रह्म-अंश घट जीव, बिना इसके घट रीता।
करें सभी निज कर्म, बताती हमको गीता।।

(११)

दाऊ कृष्णाग्रज सुभट, वासुदेव बलराम।
संकर्षण यदुकुल प्रवर, जय हलधर बल-धाम।।
जय हलधर बल-धाम, धरणि-धर के अवतारी।
शेष रेवती-तनय, सुभद्रा स्वसा तुम्हारी।।
जगन्नाथ हे नाथ !, मुरारी-सुत के ताऊ।
करते पुरी-निवास, सुभद्रा-माधव-दाऊ।।

(१२)

गौरी-गणपति-षडबदन, शिव शोभित कैलाश।
केकी केहरि, कण्ठ विष, वृषभ विरोधाभास।।
वृषभ विरोधाभास, व्याल वैरी मूषक के।
गंगाधर गौरांग, काल दुर्गुण पातक के।।
रतिपति हुए अनंग, चढ़ी जब उन पर त्यौरी।
अवढरदानी शम्भु, जयति जय माता गौरी।।

(१३)

काली-दुर्गा-शैलजा, करो तिमिर का नाश,
माता आद्या अम्बिका, अक्षर ज्ञान प्रकाश।।
अक्षर ज्ञान प्रकाश, मंगला ज्वाला पद्मा।
शशि-रवि देव प्रत्यक्ष, देव त्रय शिव हरि ब्रह्मा।।
ऊँची-ऊँची गुफा, पर्वतों बसने वाली।
वात्सल्य-रस-वृष्टि, करो शिवदूती काली।।

(१४)

समता सेवा सत्य था, सहृदय सरल सुभाव।
मानवता शुचि आचरण, छोड़े अमिट प्रभाव।।
छोड़े अमिट प्रभाव, ऋषभ तीर्थंकर नानक।
दयानन्द ऋषि तुल्य, विवेकानन्द अयाचक।।
नरसी नरहरि दास, 'समर्थ' शिवा की क्षमता।
रामकृष्ण चैतन्य, लुटाते करुणा समता।।
(१५)

सरमद सूफ़ी औलिया, थे अलमस्त फ़कीर।
देख नृशंस अतीत निज, सहमा आलमगीर।।
सहमा आलमगीर, नहीं छोड़ा आडम्बर।
क़ाफ़िर है यह पीर, पड़ा क्यों यहाँ दिगम्बर!!
राहे रब में कुफ़्र, किया सर कलम नियत बद।
अनहद गूँजा नाद, जा मिले रब से सरमद।।
(१६)

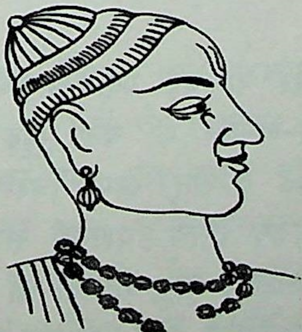
सांई शिरडी धाम के, सच्चे संत ललाम।
अमर दिव्य संदेश था, जो रब वो ही राम।।
जो रब वो ही राम, तत्त्व श्रद्धा व सबूरी।
सर्व धर्म सम भाव, मिटी आपस की दूरी।।
समता, श्रद्धा और, तोष की सुरभि लुटाई।
निखिल विश्व में पुजे, आज भी पुजते सांई।।
(१७)

तुलसी हुलसी के तनय, पिता आत्माराम।
अशुभ सकल लक्षण दिखे, मिला नहीं आराम।।
मिला नहीं आराम, पड़ी जिस पर भी छाया।
वही छोड़ता साथ, सगा भी हुआ पराया।।
पत्नी की फटकार, प्रबोधक रत्नावलि सी।
काम-भक्त से रामभक्त बन बैठे तुलसी।।

(१८)

पावन पतिता हो गई, वृंदा-तुलसी नाम।
तुलसी दल से रीझते, ठाकुर शालिगराम।।
ठाकुर शालिगराम, शीश पर चढ़ती तुलसी।
वैसे ही है अमर, राम गाथा कवि तुलसी।।
मानस मलय सगन्ध, सुवासित है मन भावन।
जीव मात्र में सीय-राम का दर्शन पावन।।

(१९)







देश – भक्ति

सूली से डरते नहीं, जो जन धर्मारूढ़।
सेवा का सत्यार्थ का, मर्म जानते गूढ़।।
मर्म जानते गूढ़, गरल वे ही पी पाते।
दयानन्द सुकरात, अमर मरकर हो जाते।।
जीवन है वह व्यर्थ, जिसे मानवता भूली।
मरते नहीं विचार, मिले फिर विष या सूली।।

(१)

फाँसी पर जो चढ़ गए, आज़ादी के हेतु।
स्वतंत्रता-जनतंत्र के, बने सुदृढ़ वे सेतु।।
बने सुदृढ़ वे सेतु, अमर चिर-युवा रहेंगे।
प्रेरक-पौरुष नित्य, यशस्वी सदा रहेंगे।।
'दास' अटल है मृत्यु, रुग्णता खों खों खाँसी।
ठोकर में है मृत्यु, देश हित चढ़ कर फाँसी।।

(२)

काला पानी-यन्त्रणा, क्रान्ति पंथ-असि धार।
सर्वार्पण की लालसा, लिए तरुण सुकुमार।।
लिए तरुण सुकुमार, मौत से आँख मिचौली।
तिल तिल गला शरीर, भूख या लाठी-गोली।।
मिटी दासता 'दास', धन्य पौरुष बलिदानी।
अंडमान-नवतीर्थ, बना वह काला पानी।।

(३)

'चरित्र विकास' लखनऊ में प्रकाशित

रानी झाँसी लक्ष्मी, मर्दों से ली होड़।
झलकारी वीरांगना, लड़ी समर बेजोड़।।
लड़ी समर बेजोड़, अजीजन मोतीबाई।
बेगम हज़रत महल, महल से बाहर आई।।
चण्डी सी हुंकार, वंद्य ललना बलिदानी।
लक्ष्मीबाई धन्य, जयति जय झाँसी रानी।।

(४)

नाना साहब पेशवा, जफ़र बहादुर शाह।
शीश कटे दो सुतों के, निर्वासन का दाह।
निर्वासन का दाह, वीर तात्या की आभा।
बीस वर्ष का युवक, सुभट करतार सराभा।।
हँस कर फाँसी चढ़े, रँगा केसरिया बाना।
वीर-प्रसूता भूमि, लाल जन्मेगी नाना।।

(५)

लोहा गोरों से लिया, किया विकट संग्राम।
'रोशन,' 'बिस्मिल', 'लाहिड़ी', थे सब पौरुष-धाम।।
थे सब पौरुष-धाम, याद आती काकोरी।
झूल गये 'अशफ़ाक', चूम फाँसी की डोरी।।
सदा रहे 'आज़ाद', वीरगति ने मन मोहा।
अरि के थे उद्गार, लिया गोरों से लोहा।।

(६)

अर्पण निज जीवन किया, देश-प्रेम के नाम।
सबल सुभट लड़ते रहे, आजीवन निष्काम।।
आजीवन निष्काम, मुक्ति-संग्राम निराला।
'खुदीराम', 'भगवती', 'भगत सिंह' भागों वाला।।
'राजगुरू', 'सुखदेव', मृत्यु का कर आलिंगन।
'शुक्ला शालिगराम', किया निज जीवन अर्पण।।

(७)

पावन बलिवेदी सजी, चले वीर शालीन।
'तिलक', 'गोखले', 'लाजपत', 'कान्हा', 'दत्त', 'जतीन'।।
'कान्हा', 'दत्त', 'जतीन', प्रवासी 'रासबिहारी'।
'ऊधम', 'परमानन्द', विलक्षण भट प्रण धारी।।
'सावरकर', 'धींगड़ा मदन' फाँसी निर्वासन।
'सूफी अम्बा', 'बाबा पृथ्वी' नाम सु-पावन।।

(८)

काया कृश दृढ़ता अटल, जन गण पर विश्वास।
जीवन भर संघर्ष रत, गाँधी मोहन दास।।
गाँधी मोहन दास, सत्य करुणा व्रत धारी।
अनय दमन का शमन, अहिंसा की बलिहारी।।
अरि-प्रति परम विनीत, रहा सद्भाव समाया।
थे सिद्धान्त प्रतीक, नहीं केवल कृश काया।।

(९)

गाँधी की आँधी चली, पराधीनता दाह।
मैत्री समझौते विनय, और मुक्ति की राह।।
और मुक्ति की राह, निकाली हतप्रभ गोरे।
निर्बल माना सन्त, कातता चर्खा डोरे।।
बना सूत शुचि सूत्र, आस जन जन ने बाँधी।
हुआ देश आज़ाद, राष्ट्र के गौरव गाँधी।।

(१०)

अनुपम यश की गन्ध शुचि, फैल रही हर ओर।
की समाप्त अस्पृश्यता, जुड़ी प्रेम की डोर।।
जुड़ी प्रेम की डोर, मनुजता भाई चारा।
बापू का सन्देश, अहिंसा धर्म हमारा।।
गाँधी पर आघात, सन्त की हत्या निर्मम।
जन प्रिय गाँधीवाद, अमर दर्शन वह अनुपम।।

(११)

सुविधा भोगी आ जुटे, कहें पुकार पुकार।
आज़ादी हमको मिली, बिना ढाल तलवार।।
बिना ढाल तलवार, सन्त की महिमा भारी।
लोकतन्त्र के सिद्ध, तान्त्रिक वामाचारी।।
त्याग सतत् संघर्ष, भुला बैठे हैं ढोंगी।
केवल बापू-राग, अलापें सुविधा भोगी।।

(१२)

गाँधी तो आदर्श थे, लिया न किंचित श्रेय।
सत्ता के सोपान पर, महिमा मण्डन गेय।।
महिमा मण्डन गेय, कर रहे कुटिल कमाई।
जब भी मिले सुयोग, चरण-चुम्बन कर भाई।।
'दास' विकृत इतिहास, लिखाते वे अपराधी।
सदियों का संघर्ष, मुक्ति के नायक गाँधी।।

(१३)

कैसे आज़ादी मिली, इस पर है मतभेद।
सदा सत्य कटु ही रहा, लिखते 'दास' सखेद।।
लिखते 'दास' सखेद, ब्रिटिश थे अवसर वादी।
हुए वीर बलिदान, रक्त की सरित बहा दी।।
विश्व-युद्ध से अस्त-व्यस्त थे गोरे ऐसे।
चेतन था परिवेश, नियन्त्रण रखते कैसे?

(१४)

नर नाहर जो सृजन के, बने सुदृढ़ आधार।
व्यक्त नहीं किंचित किया, उनके प्रति आभार।।
उनके प्रति आभार, हुए विस्मृत बलिदानी।
सत्ता का अन्तरण, व्यवस्था वही पुरानी।।
जन गण मन असहाय, अरक्षित अन्दर बाहर।
वे नेपथ्य विलीन, कहाते जो नर नाहर।।

(१५)

स्वर्ग धरा का था कभी, शीर्षस्थ कश्मीर।
केसर को बारूद से, जला रहे बेपीर।।
जला रहे बेपीर, रक्तरंजित है वादी।
इनमें नहीं विवेक, न कोई नीति फ़सादी।।
'दास' विचारो तनिक, न कोई काम शरा का।
करते नष्ट-भ्रष्ट, अरे ! क्यों स्वर्ग धरा का।।

(१६)

दन्त विषैले तोड़ कर, पाले जाते साँप।
खड़ा कापुरुष हँस रहा, सुभट क्रोध से काँप।
सुभट क्रोध से काँप, धैर्य पर लगे न धब्बा।
है न मुशर्रफ़ मनुज, जन्तु गिरगिट के अब्बा।।
नित्य बदलते रंग, हृदय के अतिशय मैले।
'दास' न करिये बात, तोड़िये दन्त विषैले।।

(१७)

लक्ष्मण-रेखा जानता, नहीं पाक नापाक।
एल० ओ० सी० का नित्य ही, उड़ता रहा मज़ाक।।
उड़ता रहा मज़ाक, वीर नित प्राण गँवाते।
क्यों केवाँच की बाड़, न सीमा पर लगवाते!!
सत्य-अहिंसा धर्म, निभाकर हमने देखा।
किन्तु अटल अनिवार्य, हमारी लक्ष्मण-रेखा।।
(१८)

करता रहा शिकार यह, ले टट्टी की आड़।
सीमा पर लगने न दी, कभी कँटीली-बाड़।।
कभी कँटीली बाड़, क्योंकि घुसपैठ करेंगे।
ले जिहाद का नाम, नीच उत्पात करेंगे।।
नहीं मित्रता योग्य, पड़ोसी नहीं सुधरता।
ले उधार परमाणु, परीक्षण जब तब करता।।
(१६)

सरहद पर- इस पार भी, करते नंगा नाच।
अगर पाक नापाक को, भेजी जाय केंवाँच।।
भेजी जाय केवाँच, करें अरि पर प्रक्षेपण।
होगा निश्चय 'दास', शत्रु पर सफल परीक्षण।।
नहीं ध्वसं-विध्वंस, अहिंसक भी यह अनहद।
कर केवाँच की मार, सुरक्षित कर लो सरहद।।
(२०)

रेशे मृदुल केवाँच के, नहीं शस्त्र परमाणु।
ये विषाक्त हिंसक नहीं, नहीं कुटिल जीवाणु।।
नहीं कुटिल जीवाणु, राजनय बनी रहेगी।
प्रक्षेपास्त्र अचूक, देह अनमनी रहेगी।।
करें कल्पना 'दास', काश आतंकी पेशे।
झेलें व्यथा केवाँच, बदन के होंगे रेशे।।
(२१)

घाटी में घुसपैठिए, पाक भेजता नित्य।
शान्ति वार्ता चल रही, इसका क्या औचित्य?
इसका क्या औचित्य, नित्य सीमा पर दंगा।
नर-पिशाच कर रहे, धरा पर नर्तन नंगा।।
'शठे शाठ्यम्' 'दास', वीरता की परिपाटी।
मक्कारों से मुक्त, करा लो स्वर्णिम घाटी।।
(२२)

सीमा की रक्षा सतत्, करते वीर जवान।
निज गौरव सम्मान के, रक्षक ये बलवान।।
रक्षक ये बलवान, नहीं चिन्ता प्राणों की।
मरु की तपती रेत, या कि हिम के वाणों की।।
देश-भक्ति का भाव, न पड़ने देते धीमा।
देकर तन मन प्राण, सुरक्षित रखते सीमा।।
(२३)

झंडा ऊँचा ही रहा, सहे घात-प्रतिघात।
समझौतों सद्भाव की, बिछती रही बिसात।।
बिछती रही बिसात, कहें जंगे आज़ादी।
छोड़ी चौकी नहीं लड़े, फिर जान गँवा दी।।
सीमा का सम्मान, और सद्भाव वितण्डा।
नर-पुंगव बलिदान, पार्थिव-तन पर झंडा।।

(२४)

माता के आँसू नहीं, थमते करके याद।
एक वर्ष पर्यन्त भी, हो न सका जयनाद।।
हो न सका जयनाद, विवशता है साँसों की।
सुविधाओं के ढेर, किन्तु नौबत फाँकों की।।
उनके हैं ये पिता, और ये भगिनी-भ्राता।
जिनकी बलि पर गर्व, कर रही भारत माता।।

(२५)

बेवा किसी शहीद की, मरने को तैयार।
निज जीवन-धन लुटा कर, बनी देश पर भार।।
बनी देश पर भार, मिलें आश्वासन थोथे।
दूध-दूध की माँग, दुधमुँहे बच्चे जो थे।।
'दास' दग्ध अर्द्धांग, करे अब घर-घर सेवा।
गौरव की अनुभूति, करेगी कैसे बेवा।।

(२६)

नायक जनता के विकल, कहते सीना ठोंक।
वे हैं गौरव देश के, आप करें मत शोक।
आप करें मत शोक, विरोधी का मुँह काला।
जाँच विचाराधीन, किया अर्थी-घोटाला।।
उच्चादर्शी नमक, छिड़क चल दिये विधायक।
सैनिक खोते प्राण, वार्तारत जन-नायक।।
(२७)





प्रकीर्ण कुण्डलियाँ

विज्ञापन अखबार में, पढ़ा एक दिन यार।
पच्चिस वर्षी युवक को कन्या की दरकार।।
कन्या की दरकार, नहीं आगे पढ़ पाए।
पाँच साल की सुता, सहित मंजिल को धाए।।
कहें 'दास' उकताय, बोझ से पीड़ित तन-मन।
गोद विराजे सुता, और पाकेट विज्ञापन।।

(१)

विज्ञापन लल्ली सहित, दर-दर ठोकर खाय।
मिल पाए उस युवक से, कष्ट अनेक उठाय।।
कष्ट अनेक उठाय, युवक बोला टर्रा कर।
शादी के क्या योग्य, पाँच साला यह दुख्तर!!
कहें 'दास' अकुलाय, फुँक गये रुपये पचपन।
कड़की में हड़ गये, नमन तुमको विज्ञापन।।

(२)

कूकुर तलवे चाटते, लम्पट पर विश्वस्त।
वाक्-बहादुर गली के, लेकिन बाहर पस्त।।
लेकिन बाहर पस्त, मस्त रहते यायावर।
घ्राण-शक्ति अनमोल, कर्म से लगें गुप्तचर।।
पालक के मुँह लगे, मिलें पट-पट्टा नूपुर।
शयन कक्ष या कार, विचरते रहते कूकुर।।

(३)

नारी यह वर माँगती, रख कर व्रत उपवास।
आज्ञाकारी पति मिले, पूँछ हिलाऊ दास।।
पूँछ हिलाऊ दास, चाटता तलवे भी हो।
करे न वाद-विवाद, खासियत यह वर की हो।।
पूजें गौरि-गणेश, सुहागन हो या क्वाँरी।
लिए आस-अभिलाष, आज की दुखिया नारी।।

(४)

जामाता का भले ही, नित करिए अपमान।
'कालू-टामी' का मगर, पूरा रखिए ध्यान।।
पूरा रखिए ध्यान, खबर यह आई भारी।
वरी श्वान ने, रंक-पिता की कन्या क्वाँरी।।
बात 'दास' की मान, मनुज क्यों शर्म न खाता?
माँगो खूब दहेज, श्वान होंगे जामाता।।

(५)

स्मारिका श्री राम नाट्य कला मंदिर शाहाबाद (हरदोई) में प्रकाशित

नारी करवा चौथ को, रख निर्जल उपवास।
चन्द्र चौथ का देखकर, ग्रहण करे जल-ग्रास।।
ग्रहण करे जल-ग्रास, नहीं 'तुलसी' की मानी।
चौथ-चन्द्र का त्याग, यथा परनारि सयानी।।
है रोचक अपवाद, वर्जनाओं पर भारी।
काल मानते हार, नहीं अबला है नारी।।

(६)

सौदा करते तनय का, कर दहेज की माँग।
करें वधू के पिता से, नित-नव-नूतन स्वाँग।।
नित-नव-नूतन स्वाँग,करें सेवा की आशा।
शोषण से मन क्षुब्ध, बहू लेती बदला सा।।
'दास' न दासी वधू, बनाती अलग मसौदा।
नित्य करे अपमान, करोगे कब तक सौदा?

(७)

दानव दुष्ट दहेज का, बहुएं जाता लील।
मृदु संबंधों में ठुँके, लोभ-द्वेष की कील।।
लोभ-द्वेष की कील, त्रस्त हैं सब बेचारे।
तदपि दिनोंदिन बढ़े, कौन सक्षम जो मारे।।
नारि बढ़ाती वंश, नारि की कृति हे मानव।
स्वार्जित पर सन्तोष, 'डावरी' दुखकर दानव।।

(८)

दानों में उत्कृष्ट है, कहते विद्या-दान।
आवश्यक पर मानते, हिन्दू कन्यादान।।
हिन्दू कन्यादान, इसलिए है वह दाता।
याचक हाथ पसार, दान दाता से पाता।।
उल्टी है पर रीति, नीच दाता है मानों।
ऊँचा है वर-पक्ष, वसूले दाइज दानों।।

(६)

जब पग से पद त्राण इक, करतल होवे आन।
भय खाते लतखोर सब, दबंगई की शान।।
दबंगई की शान, और नारी का सम्बल।
चपल चरण सुकुमार, सुशोभित सैण्डिल चप्पल।।
अपराजेय अजेय, रसिकता सबकी डगमग।
कर पनहीं दमदार, और हो नंगा जब पग।।

(१०)

धारण करते भार ये, तन का सदा विशेष।
नये-नये पर काटते, देते बहुत कलेश।।
देते बहुत कलेश, स्नेह पालिश ये चाहें।
सुत के जब आ जायँ, छोड़ दो कुमति कुराहें।।
दासों के ये 'दास' न उत्तम इन से चारण।
पर इनका गल हार, चतुर करते कब धारण?

(११)

जूतों बँटती दाल है, कर जूतम पैज़ार।
संसदीय आचरण का, यह निकृष्ट व्यवहार।।
यह निकृष्ट व्यवहार, राजनेता करते हैं।
कभी चरण-रज पोंछ, माँग अपनी भरते हैं।।
करते 'दास' सचेत, सुनों अब वीर सपूतों।
नेता मंत्री बने, बजाओ ताली जूतों।।

(१२)

जूते पग में सोहते, हाथों में क्या काम?
नेता सदृश जमीन से, जुड़े किन्तु बदनाम।।
जुड़े किन्तु बदनाम, पान पनही कहलाते।
'सेकुलर' इतने बड़े, न मन्दिर मस्जिद जाते।।
उठ जाते हो कुपित, लोग जब देहरी छूते।
'दास' तजो पाखण्ड, भले तुमसे ये जूते।।

(१३)

हाथी जैसे तने हैं, और खाल सी छाल।
द्वापर युग का वृक्ष यह, विद्यमान कलिकाल।।
विद्यमान कलिकाल, कामना पूरी करता।
कहते हैं सब लोग, दीन की झोली भरता।।
कलि का प्रबल प्रभाव, 'दास' कहता सुन साथी।
नहीं दिव्यता दिखी, लगा सरकारी हाथी।।

(१४)

दाता तरु तर बैठिके, याचक सी करतूत।
शुष्क पुष्प के वणिक से, धन्य-धन्य अवधूत।।
धन्य-धन्य अवधूत, कल्पद्रुम देख लजाया।
अनुपम-अद्‌भुत वृक्ष, नहीं दूजा जग पाया।।
पुष्प उसी को मिलें, दृव्य-घृत जो दे पाता।
सफल मनोरथ करो, भरो झोली तरु दाता।।

(१५)

ओझा-गुनिया अटपटा, वेष बना वीभत्स।
कहता पीड़ित-दुखी से, धैर्य धरो हे वत्स।।
धैर्य धरो हे वत्स, भले हो संकट भारी।
होगा नहीं अनिष्ट, शरण जब हुए हमारी।।
पैसों का क्या काम, उसे मैं समझूँ बोझा।
भूत-प्रेत सब सिद्ध, कष्टहारी मैं ओझा।।

(१६)

माला हो रुद्राक्ष की, थोड़ा कच्चा सूत।
ठर्रा, मानव-खोपड़ी, और चील का मूत।।
और चील का मूत, स्वर्ण की नारी लाना।
ये सब छोड़ मसान, लौट फिर घर को जाना।।
दूँगा मैं सब उलट, पड़ा है मुझसे पाला।
पोंकेगी वो खून, जपूँगा ऐसी माला।।

(१७)

काँपी काया भक्त की, सुन दुर्लभ सामान।
अंधी श्रद्धा देखती, चेले की मुस्कान।।
चेले की मुस्कान, कहा मत चिंतित होवें।
सब प्रबन्ध मैं करूँ, आप घर जाकर सोवें।।
तेरह सहस डकार, राह दोनों ने नापी।
भक्त पोंकता खून, ऋणी हो काया काँपी।।

(१८)

नींबू गुण की खान है, उदर-शूल के हेतु।
वायु-दोष शामक प्रबल, अम्ल स्वाद का सेतु।।
अम्ल स्वाद का सेतु, रक्त शोधक गुणकारी।
तन्त्र-मन्त्र का हेतु, बनाते कुछ कुविचारी।।
'दास' धारणा अटल, अंध विश्वासों की बू।
नाँघा-फाँदी अशुभ, पड़ा चौराहे नींबू।।

(१९)

छोड़ा अपने देश को, भाषा वेश विचित्र।
बंग्ला देशी हो गये, यहाँ सफाई-मित्र।।
यहाँ सफाई-मित्र, धर्मशाला सा भारत।
भारतीय जन त्रस्त, हो रहा जीवन गारत।।
जनसंख्या विस्फोट, बना वैसे ही फोड़ा।
उस रेले को रोक, पड़ोसी ने जो छोड़ा।।

(२०)

योगी तन से स्वस्थ है, प्रमुदित आठों याम।
किन्तु नियम से वे करें, आसन-प्राणायाम।।
आसन-प्राणायाम, भ्रामरी-मकर-शवासन।
त्राटक, कुंजर सहित, प्रचुर जल करते सेवन।।
दैहिक नहीं त्रिदोष, रहें ये सदा निरोगी।
दिव्य-कांति सम्पन्न, इसी से दिखते योगी।।

(२१)

साधक हैं जो योग के, आधि-व्याधि से दूर।
जीवन-शैली बदल कर, दिव्य प्रभा भरपूर।।
दिव्य प्रभा भरपूर, ध्यान में चित्त रमाते।
अन्तः विमल प्रकाश, नित्य नव जीवन पाते।।
योग क्षेम के हेतु, योग हो सकता बाधक।
करें लोक-कल्याण, योग के सच्चे साधक।।

(२२)

ऊपर वाला शाश्वत, गॉड खुदा भगवान।
शक्ति-स्रोत तो एक ही, नाम अनेक महान।।
नाम अनेक महान, भिन्न मत पंथ निराले।
दिया धर्म का नाम, और मतभेद निकाले।।
मानव-मानव एक, ईश सबका रखवाला।
सर्व शक्ति सम्पन्न, सृष्टि का ऊपर वाला।।

(२३)

ऊपर वाले यहाँ के, कहें ठोंक कर ताल।
पंगा मुझसे लो नहीं, नंगा करूँ धमाल।।
नंगा करूँ धमाल, मिटाऊँ तेरी हस्ती।
कर दूँगा बरबाद, निकल जायेगी मस्ती।।
किया किसे आबाद, अश्रु किसके पी डाले?
करें खोखला दम्भ, यहाँ के ऊपर वाले।।

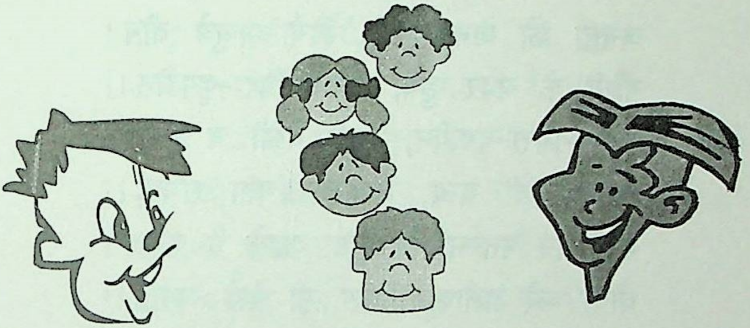
(२४)

पीड़ा निज अव्यक्त हो, पर-पीड़ा अभिव्यक्त।
गुरुता श्रेष्ठ सहिष्णुता, राग-द्वेष परित्यक्त।।
राग-द्वेष परित्यक्त, कठिन सेवा व्रत न्यारा।
विश्रुत है यह सत्य, 'दास' भगवन से प्यारा।।
सुख-दुख हैं सब ग्राह्य, चूँकि ये है प्रभु-क्रीड़ा।
मानवता का वरण करो, हर लो जग-पीड़ा।।

(२५)

'चरित्र-विकास' में प्रकाशित





हास्य - व्यंग्य

लाखों अरबों फूँक कर, खण्डित जन-आदेश।
तरस रहे सरकार को, क्षुब्ध नहीं आवेश।
क्षुब्ध नहीं आवेश, न नौ मन तेल मिल रहा।
राधा कैसे नचें, सभी का हृदय हिल रहा।।
पात ढाक के तीन, स्वाद छल-बल का चाखो।
ना सत्ता के योग्य, कह रही जनता लाखों।।

(१)

पावस के दादुर सकल, हुए भूमिगत-लुप्त।
फिर चुनाव की आस में, नेता यथा सुषुप्त।।
नेता यथा सुषुप्त, सशंकित लंकापति है।
बालि-काँख षट् मास;* और क्या-क्या दुर्गति है।।
सकल विभीषण सुहृद, तदपि निशि लगे अमावस।
कुर्सी-प्रिया सुदूर, सुहाए कैसे पावस।।

(२)

* छः महीने राष्ट्रपति शासन

जनता को जनतंत्र ने, दिये अजूबे तीन।
गाँधी के बंदर हुये, श्रवण-गिरा-दृगहीन।।
श्रवण-गिरा-दृगहीन, सुनी देखी न बुराई।
हुई बोलती बन्द, विकल-अंगता समाई।।
पंगु तीन स्तम्भ, न कुछ कहते है बनता।
चौथा करे प्रलाप, विवश सी देखे जनता।।

(३)

साधो भारत-भूमि पर, हम हैं बंधन-मुक्त।
निर्वाचन-आयोग में, तीन-तीन आयुक्त।।
तीन-तीन आयुक्त, नित्य खुड़पेंच निकालें।
वाद-वित्त-सम्पत्ति, शपथ के पंथ निराले।।
हम निस्पृह-निर्लिप्त, हमें कितना ही बाँधो।
लोकतन्त्र के 'दास', ध्वजावाहक हम साधो।।

(४)

माना हम पर चल रहे, बीस-तीस अभियोग।
ये करतूत विपक्ष की, सुन चुनाव आयोग।।
सुन चुनाव आयोग, किसी में दण्ड न पाया।
दस करोड़ सम्पत्ति, शपथ घोषित कर आया।।
प्रत्याशी बेजोड़, बनाते किसे निशाना।
सब तिकड़म का खेल, विवश जनता ने माना।।

(५)

दौरा प्रत्याशी करें, है चुनाव की धूम।
जन-गण देवी-देवता, चरण रहे हैं चूम।।
चरण रहे हैं चूम, मगन बहनें-माँ-भाई।
नेता जी ने आज, माँग कर रोटी खाई।।
अभिनय कला प्रवीण, फिरे है बौरा-बौरा।
धौंस-धृष्टता-धूल, सहो कुछ दिन का दौरा।।

(६)

सूखा हो या बाढ़ हो, या चुनाव हो आम।
भ्रष्ट व्यवस्था के लिए, हैं आँधी के आम।।
हैं आँधी के आम, या कि हैं पिकनिक के क्षण।
राहत होती हवा, हवाई हों सर्वेक्षण।।
परम-दीन हो 'दास', लपकता टुकड़े भूखा।
राहत के बटमार, व्यवस्था को क्या सूखा?

(७)

खादी से तन ढँक रहा, सत्ता का उद्योग।
सेवा के आवरण में, सुख-सुविधा का भोग।।
सुख-सुविधा का भोग, बाहुबल-छलबल देखा।
स्वयम् अर्थ सम्पन्न, न कोई लक्ष्मण-रेखा।।
मतदाता निरुपाय, मुदित अधिनायक वादी।
शुचिता की पर्याय, हो रही कलुषित खादी।।

(८)

दाग़ी छुट्टा घूमते, देखो जाते साँड़।
दाग़ी जीवन भार सा, ढोती विधवा राँड़।।
ढोती विधवा राँड़, जिन्दगी लांछित दाग़ी।
द्वेष-दमन-दुर्दैव, झेलती सहज अभागी।।
गिरी 'दास' सरकार, हुए कुछ नेता बाग़ी।
संसद में उत्पात, हटाओ मंत्री दाग़ी।।

(६)

बौना कहता गर्व से, हीन न मैं सरकार।
मेरे पूर्वज रहे हैं, श्री वामन अवतार।।
श्री वामन अवतार, 'दास' था बलि सा दाता।
लोकतंत्र में किन्तु, आप सब हैं मतदाता।।
याचक-धर्म निबाह, माँगता मत मैं छौना।
चुनिए तो श्री मान !, नहीं छल-बल में बौना।।

(१०)

पैदा जब दम्मू हुए, घर में नहीं छदाम।
होनहार पढ़ क्या करे, जन-सेवा का काम।।
जन-सेवा का काम, करोड़ों के हैं स्वामी।
दाम करें उदरस्थ, हुए दामोदर नामी।।
बढ़ा पेट का व्यास, 'दास' सेवा पर शैदा।
कोई रोक न टोक, किए जा पैसा पैदा।।

(११)

झूला लूला लालची, लंपट निपट लबार।
बे चारा चौपट करे, चटपट चारागार।।
चटपट चारागार, जेब में डाले छपरा।
मंत्री मुदित महीन, मलाई खातिर नखरा।।
विदुष-विदूषक चपल, रेल से मेल कबूला।
भारी रेलमपेल, अनारक्षित है झूला।।

(१२)

साईं इनसे मेल रख, जन प्रतिनिधि धनवान।
रैली से मत रार ले, चमचा चतुर सुजान।।
चमचा चतुर सुजान, कचहरी, थाना, दल्ले।
अरुण शिखा-मद-मीन, पड़ोसी परम निठल्ले।।
पत्रकार से और, अफ़सरों से न ढ़िठाई।
यदि अर्दली सहाय, काम बन जाए साईं।।

(१३)

भाई पहले से नहीं, गुरु, पंडित, कवि यार।
गुरु से मत भयभीत हो, प्रोफ़ेसर को मार।।
प्रोफ़ेसर को मार, बहुत पाण्डित्य बघारे।
तुझमें है क्रय-शक्ति, फिरें कवि मारे मारे।।
कविता-संग्रह छपा, विमोचन भव्य कराई।
एम०बी०बी०एस० मिली, पढ़ें क्यों मुन्ना भाई।।

(१४)

यारी करिये यार से, देख जेब का भार।
चाय-पान चलता रहे, मिलता रहे उधार।।
मिलता रहे उधार, साख पर लगे न बट्टा।
चुका समय पर चतुर, न पकड़े कोई गट्टा।।
लेकर यार उधार, अदा कर बारी-बारी।
हुनरमंद बन 'दास', निभाता जा तू यारी।।

(१५)

नेता को प्रायः मिलें, अजब-गजब उपहार।
सभा मंच से मिल रहे, गदा-मुकुट तलवार।।
गदा मुकुट तलवार, भले ही चला न पायें।
चमके चंचल फ्लैश, विदूषक से मुस्काएं।।
मुकुट शीश पर बाँध, हो गये 'दास' विजेता।
भारत के सामन्त, आधुनिक हैं ये नेता।।

(१६)

कैंची से कागज कटा, मुड़ा मिला आयाम।
जोड़ तोड़ कर दे दिया, उसे लिफाफा नाम।।
उसे लिफाफा नाम, आवरण भेद छिपाए।
सुख दुख विरह विषाद, इसी में भर कर जाए।।
किन्तु हुए बदनाम, लिफाफा और अटैची।
रहें ओट श्री (नोट), न उत्कोचों पर कैंची।।

(१७)

फल की इच्छा से नहीं, करते हैं हम काम।
जो करना था कर दिया, नहीं मिला परिणाम।।
नहीं मिला परिणाम, भाग्य था अपना खोटा।
गए खेलने खेल, विश्व में बाँध लँगोटा।।
पदक बटोरें अनुज, हर्ष से आँखें छलकीं।
कर्म किया निष्काम, करें क्यों चिन्ता फल की।।

(१८)

बाबा गाँधी का दिखा, व्यापक रूप विराट।
नोटों पर छपती नहीं, अब अशोक की लाट।।
अब अशोक की लाट, ठाट में कैसी दुविधा।
गाँधी मय हर नोट, घूस लेने में सुविधा।।
अर्थ पूर्ण संकेत, नेत्र भी किंचित दाबा।
सुविधा शुल्क वसूल, जेब में गाँधी बाबा।।

(१९)

गाँधी तेरे नाम का, निशि दिन होता जाप।
कृतज्ञता के भाव हैं, आप राष्ट्र के बाप।।
आप राष्ट्र के बाप, आपका नाम भुनाया।
जन प्रतिनिधि सामन्त, विपुल वैभव मन भाया।।
खुले आम उत्कोच, चली घपलों की आँधी।
जाँच विचाराधीन, देखते जाओ गाँधी।।

(२०)

गाँधी का अपमान है, जन सेवा व्यवसाय।
सादा जीवन है नहीं, और न अध्यवसाय।।
और न अध्यवसाय, पात्र गाली के नेता।
अवसरवादी खेल, भ्रष्ट-आचरण प्रणेता।।
सुधर जाए यह तंत्र, आस जन-जन ने बाँधी।
नोट-सड़क-संस्थान, भवन का नाम न गाँधी।।

(२१)

आली ब्यूटी पार्लर, सौन्दर्य प्रतिमान।
सँवर केश-कर्तन करा, नख-शिख तीर कमान।।
नख-शिख तीर कमान, भौंह अपनी नुचवा ले।
थ्रेडिंग से तन दुखे, फेशियल तू करवा ले।।
टैटू कलर मसाज, बॉबकट अलकें काली।
शूर्पनखा की बहन, लगेगी प्रौढ़ा आली।।

(२२)

आया को भाया नहीं, बेबी का संत्रास।
किटी पार्टी मैम की, गए काम से बॉस।।
गए काम से बॉस, रो रहा बेबी बबलू।
रमीं रमी में ममी, ठिठोली ठनगन पपलू।।
जीवित माता-पिता, किन्तु दुर्लभ है छाया।
मैम रात तक मस्त, पस्त साहब घर आया।।

(२३)

दाढ़ी के सामान हैं, नारी करे प्रचार।
करने को उत्पाद के, विपणन पर अधिकार।।
विपणन पर अधिकार, क्रीम, रेज़र या लोशन।
विक्रय के आधार, बने भोंडे विज्ञापन।।
'दास' जेब पर दृष्टि, कमाई खींचो गाढ़ी।
बनी प्रचारक नारि, नहीं जिसके है दाढ़ी।।
(२४)





सामयिक/नैतिक

चाचा नेहरू को खिला, चीनी चाऊमीन।
पंच शील की आड़ में, घुस आया था चीन।।
घुस आया था चीन, ले गया मान सरोवर।
हड़प लिया कैलाश, भूत भावन का जो घर।।
'दास' बजाते गाल, गाल पर पड़ा तमाचा।
चाऊ की करतूत, विकल थे– नेहरू चाचा।।

(१)

चाऊ-यन-लाई नहीं, कर पाए यह काम।
भारत में फैला दिए, निज उत्पाद तमाम।।
निज उत्पाद तमाम, दूर कर रहे अमा जी।
विद्युत-मीटर, ट्यूब, झालरें आतिशबाजी।।
खेल-खिलौने 'दास', चकित-चित चाचा ताऊ।
यह घुसपैठ नवीन, स्वर्ग में प्रमुदित चाऊ।।

(२)

चीनी-मीठा छोड़कर, भाती है नमकीन।
बच्चा-बच्चा खा रहा, अब तो चाऊमीन।।
अब तो चाऊमीन, अजीनोमोतो डालो।
थोड़ी सब्जी काट, भिगो नूडल्स उबालो।।
चिली टमाटर सॉस, संग क्या खुशबू भीनी।
अल्हड़ बच्चे मस्त, खा रहे व्यंजन चीनी।।

(३)

आलू सदा बहार है, सब्जी का शिर मौर।
जैसे अरहर दाल का, दालों में है ठौर।।
दालों में है ठौर, बटाटा भी कहलाता।
चाट-पकौड़ी, करी, समोसे से भी नाता।।
हो किसान मन खिन्न, खोदता ढुलमुल टालू।
लागत से कम दाम, फेंकता फिरता आलू।।

(४)

रूसी मदिरा 'वोदका', पीते चढ़े सुरूर।
अब आलू से बनेगी, सुन कर हुआ गुरूर।।
सुन कर हुआ गुरूर, बटाटा आलू देशी।
मदिरा जगत प्रसिद्ध, नाम के लिए विदेशी।।
खेतिहर के मन मगन, सुखद है खबर न लू सी।
मिलें फसल के दाम, विदेशी मुद्रा रूसी।।

(५)

लागत है क्या उपज की, इसका नहीं विचार।
मूल्य-समर्थन कृषक हित, तय करती सरकार।।
तय करती सरकार, आँकड़ों की बलिहारी।
देखे कभी न खेत, स्वेद मेहनत तप भारी।।
सुखद सुशीतल कक्ष, समिति होकर शरणागत।
कुण्टल पर दस वृद्धि, भाड़ में जाए लागत।।

(६)

हेरा फेरी में निपुण, नव धनाढ्य सम्पन्न।
उलट फेर कर बेंचते, अनुदानों का अन्न।।
अनुदानों का अन्न, छूट की लूट मची है।
खुल कर बंदर बाँट, योजना खूब रची है।।
इन्द्रजाल है सिद्ध, कुटिलता इनकी चेरी।
दौलत के अम्बार, बदौलत हेरा फेरी।।

(७)

कुड़की के अधिकार हैं, कड़की में सरकार।
कर उपकर को थोपकर, थोप रहे अधिभार।।
थोप रहे अधिभार, पिसा मध्यम कर दाता।
कर अपवंचक भला, करों से कब घबराता।।
कर न किया भुगतान, अनसुनी बंदर घुड़की।
साँठ-गाँठ का खेल, सदा ठेंगे पर कुड़की।।

(८)

भाला बल्लम असि कहाँ, बाना तीर-कमान।
बर्छी बघनख ढाल शर, और न शर संधान।।
और न शर संधान, विनाशक अणु-आयुध हैं।
शौर्य पराक्रम लुप्त, राजनय और न बुध हैं।।
उर संशय का नाग, सभी राष्ट्रों ने पाला।
प्रक्षेपण की भीति, भला इनसे था भाला।।

(९)

'अगीतायन' में प्रकाशित

चाकू पिस्टल छोड़ कर, रखिए अब 'ग्रेनेड'।
ए०के० सैंतालिस चला, बढ़िया 'फारेन मेड'।।
बढ़िया 'फारेन मेड', लीजिए ए० के० छप्पन।
एल०एम०जी० की मार, बढ़ाती नित्य बड़प्पन।।
गाँधी कालातीत, अहिंसा त्याग लड़ाकू।
हिंसा का उद्योग, छूरियाँ पिस्टल चाकू।।

(१०)

'अगीतायन' में प्रकाशित

डाकू कहता गर्व से ठोंक-ठोंक कर ताल।
वाल्मीकि हम ही हुए, हम ही अंगुलिमाल।।
हम ही अंगुलिमाल, अभी अस्तित्व हमारा।
बुद्ध-राम ने जन्म, लिया फिर नहीं दुबारा।।
शोषण-अत्याचार, बनाता अनय लड़ाकू।
या बदले की चाह, बना देती है डाकू।।

(११)

नामी लुक्का मानसिंह, दस्यु हुए जो खास।
आत्म-समर्पण कर दिया, पुनर्वास की आस।।
पुनर्वास की आस, लोक नायक से प्रेरक।
चले शान्ति की राह, अनैतिक जीवन से थक।।
चम्बल दस्यु विहीन, न रह पाया निष्कामी।
समय-समय पर हुईं, दस्यु सुन्दरियाँ नामी।।

(१२)

सीमा हीरोइन हुई, दस्यु-कर्म परिहार।
आत्म-समर्पण बन गया, कुसुमा का हथियार।।
कुसुमा का हथियार, साथ में डाकू फक्कड़।
अब चम्बल में नहीं, जेल में अक्कड़-बक्कड़।।
बीहड़ में है कष्ट, लाभ फिल्मों में धीमा।
राजनीति में पैठ, बना ले कुसुमा-सीमा।।

(१३)

'चरित्र विकास' में प्रकाशित

पाँसा चौपड़ गोटियाँ, कौड़ी दिखे न खास।
विकट चाल शतरंज की, इसमें बुद्धि-विलास।।
इसमें बुद्धि-विलास, ताश के पत्ते बावन।
हेर फेर का खेल, द्यूत कर्मी अधुनातन।।
मटका कला-प्रवीण, 'दास' सट्टे ने फाँसा।
फिर भी यदि बच जाय, शेयरों का है पाँसा।।

(१४)

बीड़ी सिगरेट फूँकिए, पर दुर्गुण पहचान।
ग्रीवा में कर्कटार्बुद, जीवन नर्क समान।।
जीवन नर्क समान, लिए जर्जरित फेफड़ा।
काया का संत्रास, जकड़ता क्रूर केकड़ा।।
मृत्यु-वधू से प्रेम, कोसती तुमको पीढ़ी।
जीवन है अनमोल, व्यर्थ है स्वापक बीड़ी।।

(१५)

'चरित्र विकास' लखनऊ में प्रकाशित

चूना कत्था व्यर्थ है, व्यर्थ मान का पान।
पान मसाला पेश है, पाउच में श्री मान।।
पाउच में श्री मान, खोल मुख फंकी मारो।
खाओ भक्ष्य-अभक्ष्य, पीढ़ियाँ अपनी तारो।।
ग्रीवा कैंसर ग्रस्त, लगे जग सूना-सूना।
अब पछताए 'दास', लगा जीवन को चूना।।

(१६)

पाती बकरी खा रही, कबिरा के उर हूक।
मानुष बकरा खा रहा, कुक्कुट भी दो टूक।।
कुक्कुट भी दो टूक, भैंस शूकर गो घोड़ा।
देते तर्क-कुतर्क, न कोई पथ पर रोड़ा।।
सहते व्याधि असाध्य, दाह से दहती छाती।
कर निरीह का हनन, आत्मा कब कल पाती!!

(१७)

दारू में गुण बहुत हैं, पीकर हो जा मस्त।
लोटा-थाली बेंच पी, घरवाली संत्रस्त।।
घरवाली संत्रस्त, मुहल्ले भर को गाली।
ज़्यादा हो यदि टुन्न, देखना सीधे नाली।।
गगन बिहारी 'दास', धरणि पर हो जा भारू।
करो उपद्रव नित्य, छके जाओ नित दारू।।

(१८)

दारू यदि मिलती नहीं, यानी हो प्रतिबन्ध।
घोषित हो जा मद्यपी, कर ले तू अनुबन्ध।।
कर ले तू अनुबन्ध, बाप तक को तुम मारो।
माँ के परम सपूत, लला-लल्ली दुत्कारो।।
अरि अपनों के 'दास', दानवों के अवतारू।
मान-प्रतिष्ठा गँवा, पिए जाओ तुम दारू।।

(१९)

हाला बाला ढालती, पीते उमर खयाम।
चारु चित्र देखें ठिठक, पिएं चुका कर दाम।।
पिएं चुका कर दाम, मद्य प्रतिबन्ध न माना।
हुए नशे में चूर, दिया शासन को ताना।।
हमसे है सरकार, हमीं से है मधुशाला।
प्याला ज़िन्दाबाद, नशीली साली हाला।।

(२०)

मदिरा के राजस्व से, मद्य निषेध-प्रचार।
दुख दारुण दे वारुणी, करो न अत्याचार।।
करो न अत्याचार, बनो मत हिटलर नाजी।
मद्य-पान मत करें, हमारे हित पापा जी।।
असमंजस में 'दास', देख विज्ञापन कबिरा।
करते मद्य निषेध, और बिकवाते मदिरा।।

(२१)

गाड़ी से हैं जा रहे, स्टियरिंग पर ध्यान।
मोबाइल भी बज उठा, उसे अड़ाए कान।।
उसे अड़ाए कान, वार्ता करें रसीली।
हो दुर्घटना ग्रस्त, ज़िन्दगी हुई कँटीली।।
करते पश्चाताप, छूटती जाती नाड़ी।
आश्रित जन असहाय, पंगु जीवन की गाड़ी।।

(२२)

अगीतायन में प्रकाशित

काँटा बाला को लगा, गाती सीना तान।
ठप्पा लगवाती थिरक, सीने पर श्री मान।।
सीने पर श्री मान, कहे बेरी के नीचे।
लगा हाय वह लगा, लगा बँगले के पीछे।।
कामुक सकल प्रलाप, शील संस्कृति पर चाँटा।
लगा नितान्त अशिष्ट, अमिट अपकारी काँटा।।

(२३)

दावा निर्देशक करे, हट कर है यह फिल्म।
सुपर डुपर हिट रहेगी, हमीं जानते इल्म।।
हमीं जानते इल्म, गीत-संगीत निराला।
डांस-इश्क-रोमांस, मिलाए सभी मसाला।।
हुई प्रदर्शित फिल्म, 'दास' बन गई छलावा।
हफ्ते भर में हटी, खोखला निकला दावा।।

(२४)

'सेवा हि धर्मः' सुन रहे, मानव-सेवा धर्म।
अहं-भाव के शमन-हित, सेवा सा सत्कर्म।।
सेवा सा सत्कर्म, किन्तु सेवा पर भी कर।
शाश्वत बदले अर्थ, व्यवस्था नई अरुचिकर।।
सेवा करते 'दास', न चाहें किंचित मेवा।
कर का कर विस्तार, परिधि में आई सेवा।।

(२५)

श्रेणी दो ही विश्व में, निर्धन औ धनवान।
माया की माया प्रबल, धनिक हुआ बलवान।।
धनिक हुआ बलवान, नित्य श्री बढ़ती जाए।
अतिशय दीन व हीन, सर्वहारा कहलाए।।
सम-श्रम-पूँजी युक्त, धरा पर बहे त्रिवेणी।
मिटे वर्ग-संघर्ष, और दुखदायी श्रेणी।।

(२६)

गाली शब्द अभद्र है, सब झगड़ों की खान।
शाश्वत-सत्य यही सुना, शब्द ब्रह्म श्रीमान।।
शब्द ब्रह्म श्रीमान, निरादर करें न इनका।
बोलें सोच विचार, मिला जीवन दो दिन का।।
कटु वचनों से बचें, बढ़ेगी शान निराली।
शशि सी शीतल शांति, ग्रहण सी उस पर गाली।।

(२७)

गारी बंधन नेह का, यही चिरन्तन-भाव।
नेगों के बदले मिले, इससे नहीं दुराव।।
इससे नहीं दुराव, ननद भावज या देवर।
समधी-समधिन मुग्ध, कुटिल साली के तेवर।।
ननदोई की छेड़छाड़, पर सलहज वारी।
जनकपुरी में राम, भरत भी खाते गारी।।

(२८)

गाली की बौछार हो, होली का हुड़दंग।
मर्यादित व्यवहार हो, भंग-रंग हो चंग।।
भंग-रंग हो चंग, मिलन का भाव घना हो।
द्वेष-कलुष कर भस्म, स्नेह-रँग हृदय सना हो।।
गाएं मस्त कबीर, चटक चूनर की लाली।
शिष्ट-हास्य रस रंग, मिष्ट होली की गाली।।

(२९)

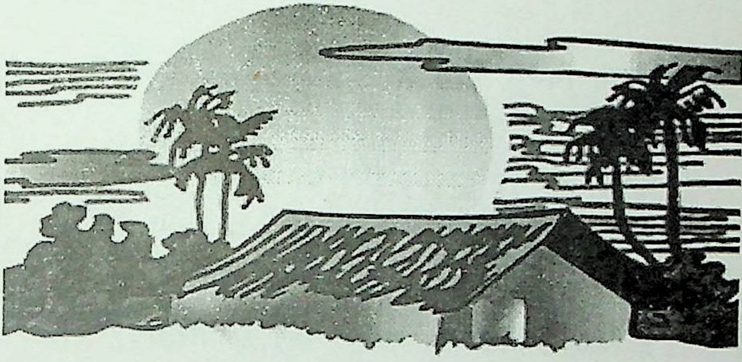
होली का हुड़दंग है, भंग रंग है चंग।
द्वेष-शत्रुता का करो, दहन होलिका संग।।
दहन होलिका संग, हृदय से हृदय मिला लो।
मलो अबीर-गुलाल, प्रीति के कमल खिला लो।।
राग-रंग में मस्त, नेह की सजा रँगोली।
लिए हास-परिहास, 'दास' आए हर होली।।

(३०) स्वर्ण गौरव (त्रैमासिक) भोपाल में प्रकाशित

होली तो हो ली भई, अब आया मधुमास।
नव संवत्सर आ रहा, स्वागत कर लो 'दास'।।
स्वागत कर लो 'दास', वर्ष नूतन हो सुख कर।
बढ़े प्रेम-विश्वास, बंधु ! मानवता-परिकर।।
सेवा है सत्कर्म, शान्ति सी कुंकुम-रोली।
दीवाली सी निशा, और हो हर दिन होली।।

(३१) स्वर्ण गौरव (त्रैमासिक) भोपाल में प्रकाशित





पर्यावरणीय

फूली सरसों हो गया, धरती का शृंगार।
हरित पीत कालीन सी, मुक्त-प्रकृति के द्वार।।
मुक्त प्रकृति के द्वार, कृषक का श्रम रँग लाया।
धरणी भरणी और, ईश को शीश नवाया।।
असमय की बरसात, अन्नदाता को सूली।
बिखर गये तृण-पात, रौंदता सरसों फूली।।

(१)

गेहूँ बोया श्रम किया, हुई फसल तैयार।
बाली पकतीं देखता, मुदित सकल परिवार।।
मुदित सकल परिवार, द्वार आएं बाराती।
आत्म मुग्ध तिय सहित, सुता किंचित सकुचाती।।
हुआ यवनिका पात, सोचता सपने में हूँ।
अंधड़-झंझा-उपल-वृष्टि से चौपट गेहूँ।।

(२)

मौसम निष्ठुर हो गया, चली भाद्रपद, लूक।
पुरवाई बैसाख में, कृषकों के उर हूक।।
कृषकों के उर हूक, प्रकृति पर निर्भर खेती।
खाद सिंचाई बीज, सभी ने गर्दन रेती।।
मुकर गए यदि मेघ, फलित होगा कैसे श्रम!
है किसान निरुपाय, बरसते यदि बे मौसम।।

(३)

ऊसर धरती हो रही, रासायनिक प्रभाव।
उत्पादों में हो गया, पोषक-तत्व अभाव।।
पोषक तत्व अभाव, बढ़ी उर्वरता भारी।
स्वाद गन्ध से हीन, शाक-भाजी तरकारी।।
बदला भू का रंग, नहीं नैसर्गिक धूसर।
प्रचुर उपज है कृत्रिम, बनेगी धरती ऊसर।।

(४)

पौधा तो रोपा नहीं, नित्य काटते पेड़।
धरती को आहत किया, खेत खा रही मेड़।।
खेत खा रही मेड़, वृक्ष पृथ्वी के भूषण।
मेह-नेह संतुलन, दूर ये करें प्रदूषण।।
चेता यदि तू नहीं, गिरेगा मानव औंधा।
वृक्ष काटना रोक, लगाए जाओ पौधा।।

(५)

साँडा कुछ खाता नहीं, केवल पीता वायु।
यह रहस्य आयुष्य का, जीता लम्बी आयु।।
जीता लम्बी आयु, जान दे देता परहित।
इसे तेल में पका, कार्य करते सब गर्हित।।
हुई प्रदूषित वायु, मनुज का फूटा भाँडा।
वात-दोष हर वायु-दोष से पीड़ित साँडा।।

(६)

नालों सी नदियाँ हुईं, मीन मरें जल बीच।
पावन-मार्जन आचमन, कैसे हो जल कींच।।
कैसे हो जल कींच, सरित-सर हुए प्रदूषित।
नहीं तरी को ठाँव, नदी जलकुंभी पूरित।
कुछ तो चेतो 'दास', नदी उच्छिष्ट न डालो।
नदी रहेगी स्वच्छ, मोड़ लो रुख यदि नालों।।

(७)

पादप कटते जा रहे, गूलर पाकड़ आम।
नित्य प्रदूषण बढ़ रहा, प्रकृति हो रही वाम।।
प्रकृति हो रही वाम, हृदय छलनी अवनी का।
किया आकलन नहीं, विकट संकट भावी का।।
अनावृष्टि अतिवृष्टि, विश्व में बढ़ता आतप।
जीवन के पर्याय, परम पावन प्रिय पादप।।

(८)

सागर की शालीनता, और धरा का धीर।
अनय मनुज के सह रही, प्रकृति नटी बे पीर।।
प्रकृति नटी बे पीर, दुसह दोहन प्रतिगामी।
परिणति आतप शीत, प्रलय पर्याय सुनामी।।
भीषण भूस्खलन, बाढ़ या छलकी गागर।
सूखा या भूकम्प, और अब डोला सागर।।
(९)

नामी सुरसा अहि जननि, बने न जिसके ग्रास।
हनुमत मेधावी प्रबल, रघुवर के प्रिय दास।।
रघुवर के प्रिय दास, लंकिनी को संहारा।
क्षय अक्षय का किया, पार कर सागर खारा।।
सेतु-बन्ध से विवश, हुआ रत्नों का स्वामी।
उसी उदधि की लहर, लहर का कहर सुनामी।।
(१०)

चौरा तुलसी का नहीं, आँगन गोबर लीप।
सुघड़ अल्पनाएं नहीं, अमराई न समीप।।
अमराई न समीप, ग्राम्य जीवन मन भावन।
चौपालों का लोप, हुआ दुर्लभ अपनापन।।
पनघट हुए विलुप्त, आधुनिकता का दौरा।
सरल हृदय ग्रामीण, न पूजें तुलसी-चौरा।।
(११)

झूला रसरी अब नहीं, और न तरु की छाँव।
आल्हा-कजरी भी नहीं, कहाँ गए वे गाँव।।
कहाँ गए वे गाँव, श्रमिक श्रम खेत कृषक है।
नगरों का व्यामोह, पलायन गरल-चषक है।।
खेतिहर-श्रमिक विपन्न, फिर रहा फूला-फूला।
आश्वासन की पेंग, प्रगति नारों का झूला।।

(१२)

पाहुन का आतिथ्य वह, अतिथि-देव का भाव।
बिस्तर नर्म पुआल के, जलते हुए अलाव।।
जलते हुए अलाव, राब-गुड़-छाछ रसावर।
रमणी घूँघट ओट, पाँव में रचे महावर।।
साक्षात् सहकार, कबड्डी खो-खो की धुन।
किसी गेह के अतिथि, गाँव के होते पाहुन।।

(१३)





काशी

काशी के रक्षक सदा, भैरव श्वान सवार।
कोतवाल इस नगर के, इनका गण्डा धार।।
इनका गण्डा धार, वृद्ध बालक नर-नारी।
परा शक्तियाँ दूर, मिले आशीष सुख कारी।।
विश्वनाथ का नगर, बसें बाबा अविनाशी।
सप्तपुरी विख्यात, उन्हीं में पावन काशी।।

(१)

ब्रज कुमुदेश में प्रकाशित

तारा-रोहित सत्य-हित, चक्रवर्ति सम्राट।
हरिश्चन्द्र आकर बिके, इस काशी की हाट।।
इस काशी की हाट, चूँकि यह शिव की नगरी।
जाग्रत यहाँ मसान, अहर्निश रात दुपहरी।।
'दास' डोम के हुए, सत्यव्रत अनुपम धारा।
तारो काशी नाथ, सुना बहुतों को तारा।।

(२)

ब्रज कुमुदेश में प्रकाशित

काशी करवट भी यहीं, मर्णिकर्णिका घाट।
हरिश्चन्द्र का घाट भी, पर पण्डों के ठाट।।
पर पण्डों के ठाट, पंच गंगा जग पावन।
ब्रह्मा घाट प्रसिद्ध, दशाश्वमेध मन भावन।।
वाराणसी कहाती, नद बहती वरुणा सी।
'असी गंग के तीर', वही तुलसी की काशी।।

(३)

ब्रज कुमुदेश में प्रकाशित

नीमा-नीरू धन्य थे, पाकर पुत्र कबीर।
सद्गुरु रामानन्द से, काशी में मति धीर।।
काशी में मति धीर, नाम कर गए कबीरा।
पाखण्डों पर चोट, किन्तु जन-जन के हीरा।।
उलट बाँसियाँ खूब, साखियाँ कहीं असीमा।
मगहर त्यागी देह, तृप्त निर्गुण सुन नीमा।।

(४)

ब्रज कुमुदेश में प्रकाशित

दारा संस्कृत सीखता, काशी किया प्रवास।
धर्मान्धता न टिक सकी, अन्तर हुआ प्रकाश।।
अन्तर हुआ प्रकाश, किन्तु भ्राता अभिमानी।
मन्दिर को कर ध्वस्त, रची मस्जिद अज्ञानी।।
अंश ध्वंस के शेष, देख रोता जग सारा।
धिक-धिक आलमगीर, अमर है मर कर दारा।।

(५)

काशी विद्यापीठ है, संकट मोचन-धाम।
तुलसी ने की साधना, कर्म-भूमि अभिराम।।
कर्म-भूमि अभिराम, साधु सन्तों की नगरी।
महामना की अमर, कीर्ति भू तल पर पसरी।।
हर हर बम बम दिव्य, घोष सुन मुक्ताकाशी।
होते मुदित नरेश, विलक्षण है शुचि काशी।।

(६)

चूड़ा मटर प्रसिद्ध है, मगदल यहाँ विशिष्ट।
ठंडाई है भाँग है, कचौड़ियाँ स्वादिष्ट।।
कचौड़ियाँ स्वादिष्ट, पान मघई मतवाला।
प्रस्तर के सोपान, संभल कर चलने वाला।।
गलियों का संजाल, गिरे ऊपर से कूड़ा।
काशी होती स्वच्छ, भला तब लगता चूड़ा।।

(७)

काशी वासी घोंटते, विजया बाँध लँगोट।
नगर-भ्रमण कर डालते, दो गमछों की ओट।।
दो गमछों की ओट, शम्भु सा फक्कड़पन है।
हर्र-राजा उद्घोष, गंग से अपनापन है।।
शिव-त्रिशूल पर टिकी, मानते हैं विश्वासी।
सत्य कथन है, तीन लोक से न्यारी काशी।।

(८)

पंडित मोहन मदन का, स्वप्न यहाँ साकार।
आर्य सभ्यता का हुआ, है असीम विस्तार।।
है असीम विस्तार, साधना महामना की।
करती सभा प्रचार, नागरी की छवि बाँकी।।
लंका भी है यहाँ, बसे लघु देश अखण्डित।
व्यवसायी भी यहाँ, विविध भाषायी पण्डित।।

(९)

नाटी इमली का यहाँ, अद्भुत भरत मिलाप।
कलियुग में भी देखिए, प्रभु का प्रबल प्रताप।।
प्रभु का प्रबल प्रताप, मेघ छाया कर जाते।
राम भरत को मुदित, प्रेम से हृदय लगाते।।
आते स्वयम् नरेश, सड़क जन-जन ने पाटी।
लीला भव्य विराट, कहाती इमली नाटी।।

(१०)

साड़ी काशी की रुचिर, स्वर्ण-रजत का काम।
शहनाई उस्ताद का, बिस्मिल्ला खाँ नाम।।
बिस्मिल्ला खाँ नाम, नगर का मान बढ़ाया।
काशी प्रमुदित हुई, देश का रत्न कहाया।।
सावधान हो 'दास', यहाँ के ठग न अनाड़ी।
दस हजार में दो हजार की मिलती साड़ी।।

(११)

काशी तुझको नमन है, जन्म-भूमि शिव-धाम।
सुबह बनारस थी सुखद, किन्तु विधाता वाम।।
किन्तु विधाता वाम, शिल्प पर ग्रहण कलूटा।
यायावरी-विपन्न, बनारस ऐसा छूटा।।
मिली चाकरी निषिध, लांछित वृत्ति अमा सी।
अब लखनऊ निवास, अवध में शाम न काशी।।

(१२)

हिन्दी - भाषा

भाषा हिन्दी कर्ण प्रिय, बोध गम्य अभिव्यक्ति।
देव नागरी लिपि सरल, 'शशि-तुलसी' अनुरक्ति।।
'शशि-तुलसी' अनुरक्ति, सूर-मीरा-रत्नाकर।
भारतेन्दु-रसखान, उग्र-नागर जय शंकर।।
पंत-निराला-रेणु, राष्ट्र कवि की अभिलाषा।
बने कंठ का हार, हमारी हिन्दी भाषा।।

(१)

'राष्ट्र धर्म' लखनऊ तथा
'भाव चित्रण' में प्रकाशित



कवि–परिचय



नाम	-	जयराम दास रस्तोगी 'दास'
पिता	-	स्व० राम आसरे रस्तोगी
माता	-	स्व० मन्नी देवी
जन्मतिथि	-	पाँच अप्रैल सन् उन्नीस सौ इक्यावन
जन्म-स्थान	-	काशी (उ०प्र०)
शिक्षा	-	एम०ए० (हिन्दी)
सम्प्रति	-	कृषि उत्पादन मण्डी समिति में लेखाकार के पद पर सेवारत
स्थायी पता	-	538का।।/1592, त्रिवेणी नगर III, सीतापुर रोड, लखनऊ (उ०प्र०) 226020
दूरभाष	-	0522-2758448

कवि–परिचय



नाम - जयराम दास रस्तोगी 'दास'

पिता - स्व० राम आसरे रस्तोगी

माता - स्व० मन्नी देवी

जन्मतिथि - पाँच अप्रैल सन् उन्नीस सौ इक्यावन

जन्म-स्थान - काशी (उ०प्र०)

शिक्षा - एम०ए० (हिन्दी)

सम्प्रति - कृषि उत्पादन मण्डी समिति में लेखाकार के पद पर सेवारत

स्थायी पता - 538का।। /1592, त्रिवेणी नगर III,
सीतापुर रोड, लखनऊ (उ०प्र०) 226020

दूरभाष - 0522-2758448